इसका संकेत किया गया है जिसे नरहरिदास ने भक्तिरत्नाकर में उद्धृत किया है-

अहे श्रीनिवास कृष्ण रसेर आलय। गीतज्ञेर शिरोमणि रासे विलसय॥
परम अद्‌भुत शोभा श्रीरासमण्डले। परस्पर गीत प्रकाशये कुतूहले॥
गीतेर लक्षण हय अनेक प्रकार। धातु मातु सह गीत प्रसिद्ध प्रचार॥
अनुरागजनक ए धातु मातु हय। गीत अवयव धातु मातु रागादय॥

इसमें कहा गया है कि जो श्रीनिवास है, वे रस की प्रतिमूर्ति होने से गीतों के वर्ण्य बने हुए हैं। वे इसी कारण गीतज्ञों में शिरोमणि है। वे गीतप्रेमी होने से रास में विलसते हैं, शोभायमान होते हैं। संगीत के कारण ही रास मण्डल की शोभा अनुपम है। परस्पर गीत के गान से उसमें कुतूहल का जागरण होता है। गीत वे ही प्रसिद्ध होते हैं जिनमें धातु-मातु का समन्वय होता है। ये धातु-मातु अनुराग के जनक होते हैं। धातु गीत का अवयव है तो रागादि विशेषताएं मातु के रूप में प्रसिद्ध है। नारदसंगीत संहिता में नादात्मक गीत को धातु कहा गया है- तत्र नादात्मकं गेयं धातुरित्यभिधीयते।

अनिबद्ध और निबद्ध गायन

रघुनाथदास कृत गोविन्दलीलामृत में रास मण्डल में दो प्रकार के गीतों के गायन का साक्ष्य मिलता है जो क्रमशः अनिबद्ध और निबद्ध बताए गए हैं। वहां 'सा रि ग म प ध नि' स्वरपूर्ण आलाप ही अलग-अलग प्रकार से

किए गए और शुद्ध तथा विकृत दोनों प्रकार की जातियों का गान किया गया। शुद्ध जाति के सात और विकृत जाति के ग्यारह प्रकार के गायन बताए गए हैं- अनिबद्धं निबद्धं च द्विधा गीतं च ते जगुः। सा रि ग म प ध न्याख्य स्वरानालापपुः पृथक्॥ शुद्धां चाविकृतां जातिं द्विविधां च मुदा जगुः। तत्र सप्तविधां शुद्धामेकादशविधां पराम्॥ (गोविंदलीलामृत 22, 77-78) इसी प्रकार वहां षडज, मध्यम और गान्धार तीनों ग्रामों के तीनों प्रकारों का गायन हुआ और उनमें विशेषकर मानवों के लिए अगोचर, असाध्य गांधार ग्राम भी गाये गए। सात स्वरों की बाईस श्रुतियां और 49 तानों तथा इक्कीस मूर्च्छनाओं का गान किया गया।

शुद्ध, सालग और संकीर्ण गान

गान में शुद्ध, सालग और संकीर्ण के भेद से निबद्ध तीन प्रकार का गान बताया गया है जिनमें शुद्ध के तीन प्रकार बताए गए हैं- प्रबंध, वस्तु और रूपक। संगीतदर्पणकार का मत है कि शुद्ध राग वे होते हैं जो पूर्णरूप से शास्त्रोक्त रीति से गाये जाते हैं और अन्य रागों का जिनमें मिश्रण नहीं होता है। सालग को छायालग भी कहा जाता है, उनमें दो रागों का मिश्रण होता

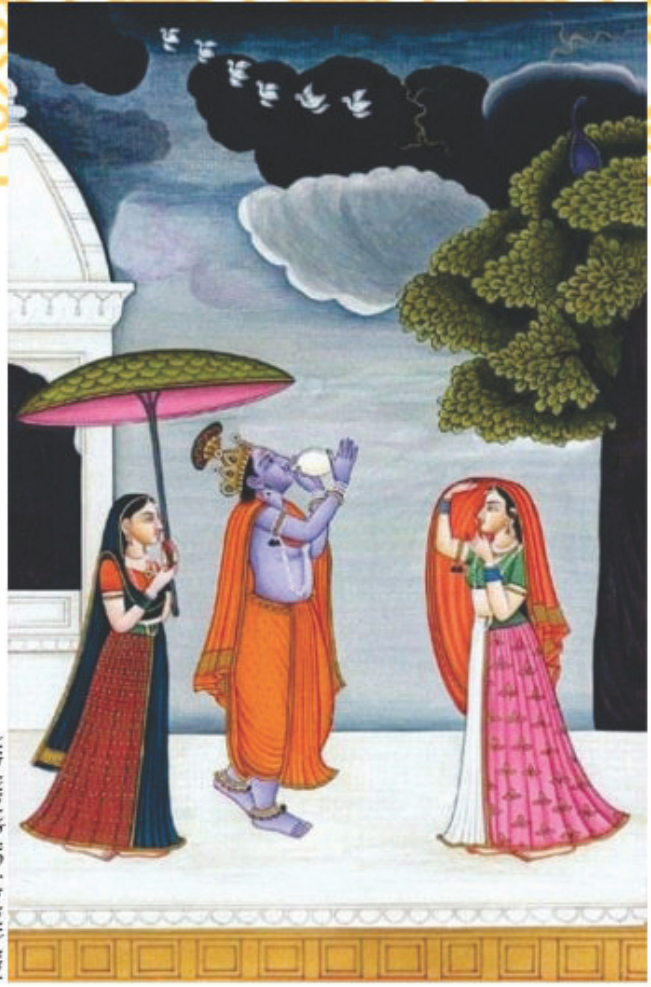

चित्र सौजन्य : डॉ. दलजीत कौर

है। इसके अतिरिक्त संकीर्ण राग भी बताए गए हैं जो शुद्ध और सालग रागों के मिश्रण होते हैं। संगीत मार्ग और देशी दो प्रकार का कहा गया है। मार्ग संगीत का नाम गांधर्व भी है जिसके स्रष्टा ब्रह्मा भरत बताए गए हैं और देशी पद्धति से जो लोगों का विनोदन करता है और जो देश-देशान्तर में नाना रूपों का होता है, वह देशी संगीत होता है।

शुद्ध के प्रबन्ध में पुनः स्वरपाठादि के नाना प्रकार होते हैं और रागों के गायन में ग्रहस्वर एवं न्यास स्वरों का प्रदर्शन होता है। जो राग सात स्वरों से युक्त होते हैं, वे सम्पूर्ण, छह स्वरों से युक्त राग षाडव और पांच स्वरों से युक्त राग औडव कहे जाते हैं- सप्तस्वरांस्तु सम्पूर्णान् षट्स्वरान् षाडवाभिधान्। पञ्चस्वरानौडवांश्च जगुस्ते तांस्त्रिभेदकान्॥ इसके अनेक राग-रागिनियां हैं। यथा- मल्हार, कर्णाट, नट्ट, साम, केदार, कामोद, भैरव, गान्धार, देशाग, वसन्त, मालव, श्रीगुगारी, रामकेरी, गौरी, आसावरी, गौंडकरी, तोड़ी, वेलावली, मण्डल गुर्जरी, वराटिका, देशवराटिका, मागधी, कौशिकी, पाली, ललिता, पटमंजरी, सुभग, सिंधुड़ा, मेला आदि। (गोविन्द-22, 85-88)

वैष्णव संगीत शास्त्र के अन्तर्गत भक्तिरत्नाकर में भी रागों के ये ही नाम आए हैं। इस प्रकार संगीत को मध्यकालीन ग्रंथों में रास आदि लीलाओं और पदों-कीर्तनों की प्रस्तुतियों के साथ जोड़कर देखा ही नहीं गया बल्कि उसके उपयोग पर भी ध्यान दिया गया। इसी कारण इस काल की अनेक रचनाओं में संगीत के स्वरूप, नाद, जातियां, अंग, राग-रागिनियों का वर्णन भी संस्कृत सहित देशज भाषाओं में भी किया जाने लगा था। ब्रह्म और शिव की तरह हरि को भी नादस्वरूप माना गया- नादरूपं परं ज्योतिर्नादरूपा स्वयं हरिः।